ओ३म्

गङ्गा-की-महिमा ॥

पं० गणेशप्रसाद, सम्पादक

भारतसुदशाप्रवर्त्तक फर्रुखाबाद

लिखित

इस लेख में गङ्गा की सच्ची महिमा

का वर्णन है ।

सत्यव्रतशर्मा द्विवेदी के प्रबन्ध से

सरस्वतीप्रेस-इटावा में छपी

ता० १४ । ३ । १९०१

प्रथमवार १०००]

गुरु विरजानन्द

4993

परिग्रहण क्रमांक

दयानन्द

ओ३म्

गङ्गा-की-महिमा ।

नदी

परमात्मा ने जिस बुद्धिमत्ता से पहाड़ों को ऊंचा करके वहां से नदी की धारा छोड़ी है उसी पवित्र ज्ञान से नदियों को खाड़ी व समुद्र में मिलाया, अहो ! इन सरिताओं की कैसी कौतुकमय घटना है जो चारों ओर धरती को सींचती हुई अपने पति सिन्धुराज की गोद में आस्था करती हैं-जिस प्रकार सुगृहिणी अपने घर को स्वच्छ और पवित्र रखती है उसी प्रकार ये तरंगिणी बाला भी पृथ्वीरूप गृह को शुद्ध और निर्मल करतीं हैं-इनके विमल जलसे लाखों बीघे धरती सिंचती और धन धान्य से पूरित होती है-व्यापारादिकार्यवशगमनागमन भी इन्हीं के सहारे होता है-किनारों पर ठौर २ रम्यस्थान बने हुए हैं-स्नान जलपान और ईश्वर का ध्यान भी इनके किनारे होता है अब हम भारत की कुछ प्रसिद्ध नदियों में से गंगा का वृत्तान्त लिखते हैं ।

गंगा

भारत में सब से बड़ी और पवित्रतोया गंगा नदी है-जो हिमालय से निकली है और पन्द्रह सौ मील धरती सींचती हुई अनेक प्रवाहों से बंगाले की खाड़ी में गिरती है।

इस के निकलने के स्थान को गोमुख वा गंगोत्तरी कहते हैं—यह स्थान समुद्र के स्तर (धरातल) से १४००० चौदह हज़ार फ़ुट ऊंचा है वहां पर सौ गज़ के अनुमान एक ऊंची हिमराशि है उस के नीचे एक मोखे से ९ गज़ चौड़ी और १ गज़ गहिरी धारा निकलती है। यही धार आगे २ चौड़ी होती गई और अनेक नदियों के मेल से बहुत बाहिरा व चौड़ा पाट हो गया है—राजमहल से आगे गंगा की कई धारा होगई हैं—जो धार कलकत्ते के नीचे होकर सागर के टापू के पास समुद्र में मिली है भागीरथी व हुगली के नाम से प्रसिद्ध है। अधिकांश हिन्दू इसी को मुख्य गंगा मानते हैं—और इसी के जल को शिवलिंग पर चढ़ाने का विशेष पुण्य समझते हैं। परन्तु जो धारा ब्रह्मपुत्र में मिल कर पद्मा पद्मा अथवा पद्मावती नाम से प्रसिद्ध है उस का इतना अधिक पुण्य नहीं मानते—देखो इस अनोखी समझ को। एक ही अंग के दहिने बाएं दो हाथ हैं। दोनों में एक ही प्रकार का रसरक्त भरा है। भेद भाव अपनी भोंडी समझ का है—अस्तु यह पद्मा धारा शहबाजपुर नामक टापू के सामने समुद्र में गिरती है—इन दोनों धारों के बीच अनुमान सौ कोस का अंतर है—जल की अधिकता से यहां की धरती में बहुत दलदल है। यहां पर एक अति भयानक सघन वन है। उसे सुन्दरवन कहते हैं यह वन इतना घना है कि भगवान् भास्कर की प्रखर

किरणें तक स्वच्छन्द प्रवेश नहीं करतीं—इस वन में सिंह व्याघ्र बंदर लंगूर तथा भांति २ के पक्षी निवास करते हैं सर्प भी बड़े २ विषधर और प्रलम्ब रहते हैं-नाना प्रकार के कुसुमित वृक्षों और पक्षियों के कलरव से तो अवश्य यह सुन्दरवन है परन्तु वन्य पशुओं के भीषण निनाद से अतीव भयंकर और अगम्य है—पथिकजन नावों पर बैठे ही यह वन देखते हैं. उतर कर उस में घुसने का साहस नहीं करते। इसी वन के नीचे कुलटा स्त्री की भांति गंगा ने समुद्रसदन में बिना बुलाये प्रवेश कर अपना महत्व खोया है—समुद्रमें मिलने के पूर्व अर्थात् उद्गम स्थान पर जो जल में स्वच्छता आरोग्यता और मधुरता है वह यहां नहीं। गंगा के जल का जो हमारे देश के पण्डितों ने महत्व वर्णन किया है. इस से उन की परमविद्वत्ता प्रकट होती है.। यही माहात्म्य बढ़ा कर धर्म के रूप में लाया गया-यह बात दूसरी है। परन्तु इतना क्या हमारे देशवालों का थोड़ा अनुभव और पाण्डित्य है कि पृथ्वी की समस्त नदियों से इसे श्रेष्ठ निश्चय किया—इस बात की साक्षी विदेशी भी देते हैं.—मार्कट्वीन साहब * ने भूमण्डल भरके जलों को जांचकर निश्चय किया है कि गंगाजल के समान स्वच्छ हलका और रोग नाशक कोई जल नहीं हैं। प्रयाग के डाक्टर हे-

*देखो वेंकटेश्वर समाचार ता० १। १२। १९०० ई०

नकिन के लेख के आधार पर एमेरिका के एक डाक्टर ने "फा-लोइंगदीइन्ववेटर" नामक पुस्तक में लिखा है कि डाक्टर हेनकिन ने काशी जाकर गटरों का पानी जहां पर गंगा-जी में गिरता है वहां का जल लेकर उस को जांच की। गटरों के कारण उस जल में प्रत्येक घन सेंटीमीटर में लाखों जन्तु देखपड़े। इसी तरह उन्हों ने एक लाश को किनारे पर बांधकर उस के आस पास का पानी जांचा। इन दोनों जाचों से जाना गया कि असंख्य जन्तु ६ घंटे के बाद नि-तान्त नष्ट होकर जल निर्मल हो गया,

अब्दुलहकीमखां जो सन् १७९२ ई० में बीजापुर के जिले के बीच शाहनूर का नव्वाब था ५०० सौ कोस से मंगाकर गंगाजल ही पिया करता था। अकबर के दरबार में भी इस जल का बहुत आदर था. अब आप समझ सकते हैं कि गंगाजल कितना उत्तम है. जिस पर हमारे देश के कवियों ने तन्मय होकर कविता की है—सो यहां तक कि गंगा को ईश्वर बना दिया वरन परमेश्वर से भी परे उस का पद स्थिर किया। गंगालहरी को बनानेवाले जगन्नाथ त्रि-शूली ने नीचे लिखे छन्द में गंगा को सर्व नियंता भगवान् से ऊपर कर दिया है। इस छंद का अर्थ हम ने पं० सदा-शिवकृता टीका के अनुसार ही लिखा है जैसा कि हरि-प्रसाद भागीरथ प्रेस बम्बई में छपी है॥

नयत्साक्षाद्वेदैरपिगलितभेदैरवसितं,
नयस्मिञ्जीवानांप्रसरतिमनोवागवसरः,
निराकारंनित्यं निजमहिमनिर्वासिततमो ।
विशुद्धंयत्तत्त्वं सुरतटिनितत्त्वंनविषयः ॥

हे ! देवों की नदी गंगे ! जो ब्रह्म अद्वैत एक ही है और दूसरा कुछ नहीं है ऐसे भेदबुद्धि निकालने वाले वेदों ने भी ऐसा ही ब्रह्म है यह खुलासा कर के नहीं कहा और जिस ब्रह्म में व्यास आदि जीवों की मन वाणी नहीं घुसती अर्थात् वह न तो मन से सोचा जाता है और न मुंह से कहा जाता है और जो हाथ पांव आदि आकारों से रहित उन में बंधा हुआ नहीं ऐसा व नित्य उत्पत्ति व नाश आदि करके रहित निर्विकार और अपने तेज से अंधेरा दूर करनेवाला स्वयंप्रकाशवान् और शुद्ध अर्थात् माया के मलों से रहित । ऐसा जो तत्त्व ब्रह्म सो तूही है । तू माया की बनाई ऐसी कोई वस्तु नहीं है । अस्तु यह तो अपने २ विचार की बात है, चाहे कोई जड़ को चैतन्य और चैतन्य को जड़ बतावे, किन्तु इतना हम अवश्य कहेंगे कि गंगा का जल पेय तथा स्नानीय है और स्वास्थ्य लाभ का देने वाला है ॥

सच तो यह है कि सद्विद्या का लोप होने पर स्वदेश में अविद्या का अंधाकार फैल गया । धर्म के भूखे भारत-

वासियों ने विचारशून्य होकर जिस वस्तु को उत्तम देखा उसे ईश्वर जान पूजने लगे जैसे जल की उत्तमता से गंगा को उसी प्रकार सवारियों में श्रेष्ठ होने से रेल के इंजन को तथा लेख के सौंदर्य से छापे की कल (प्रेस) को पूजने लगे। भट्ठी तथा हलवाई की भी पूजा सर्वत्र होती है। गोबरगनेश बनियों में कांटा बाट तक दिवाली को पूजा जाता है। हमारे भोले भाइयों को यह ज्ञान न रहा कि जड़ वस्तु ईश्वर नहीं किन्तु उस के भीतर व बाहर अखंडरूप अपरिछिन्न परमात्मा है वही पूज्य है और उसकी पूजा भी जड़पदार्थ से नहीं किन्तु आत्मध्यान और आज्ञा पालन से होती है। यहां वालों की विचारहीनता ही देश में जलस्थल पशुपक्षी और वृक्षादि कों की पूजा का हेतु हुई है। गंगा लहरी के कर्त्ता जगन्नाथ त्रिशूली को इतना ज्ञान न रहा कि जिस छंद में हम परमेश्वर को निराकार और मन वाणी के परे बता चुके उसी छंद में साकार तथा मन वाणी के गोचर प्रकृत्यात्मक गंगा जल को ईश्वर कहते हैं। अस्तु जैसे जलों में गंगा जल भोले लोगों के निकट पूज्य है वैसे ही वृक्षों में पीपल वा तुलसी पशुओं में गौ। पक्षियों में गरूड़। वन्य पशुओं में हाथी; मुर्दों में मुसलमानों की क़बरें। चूल्हों में भट्टी। कलों में कुम्हार का चाक वा धोबी की नाद। रेंगने वाले जन्तुओं में सांप—इन के सिवाय घोड़ा गदहा. रीछ बंदर लंगूर ईंट पत्थर. लोहा

और तांबा आदि धातु कौन वस्तु है जो उन के यहां पूज्य नहीं. यद्यपि पूजा सब की करनी चाहिए यह हम भी कहते हैं. परन्तु वही जो उस के उपयुक्त है. जैसा कि आर्यसमाज के सातवें नियम में कहा गया है कि सब के साथ प्रीति पूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिये फलतः यथोचित वर्त्ताव का नाम ही पूजा अर्थात् सत्कार है। यदि ऐसा नहीं मानते तो उन को चाहिये कि जहां मनुस्मृति में स्त्रियों का पूजन लिखा है वहां पर भी उनका चरण धोय चरणोदक लिया करें तब ही कट्टर मूर्त्तिपूजक कहावेंगे

कोई पौराणिक भाई इस भ्रम में हैं कि वेदों में भी गंगा का पूजन है जैसा कि ॥

"इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि-स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या, मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया" ॥

(ऋ० १० । ७५ । ५)

ऋग्वेद के इस मंत्र में गंगा शब्द आया है. उस का अर्थ इसी बहने वाली गंगा का किया है यद्यपि निरुक्तकारने "गङ्गा गमनात्" यह निरुक्ति की है अर्थात् जिस का सुन्दर गमन वा प्रवाह हो उसे गंगा कहते हैं सो इस भागीरथी का नाम गंगा नहीं यह पीछे से रक्खा गया जैसे अब भी

आनी लड़कियों का नाम लोग गंगा रखलेते हैं इसी वहने वाली का नाम किसी स्थान के लोगों ने गंगा किसी जगह वालों ने पद्मा इत्यादि रख लिया इसी प्रकार यमुना का अर्थ निरुक्तकारने यों किया है यमुना, "प्रयुवती गच्छतीति वा प्रयुतं गच्छतीति वा" जोड़ती हुई चलने वाली वा जुड़ी हुई चलने से यमुना, इस निरुक्त के अनुसार अनेक नदियों के नाम भी यमुना हो सकते हैं। यदि कोई कहे कि गंगे यमुने ऐसा सम्बोधन क्यों दिया? यह वेदों की शैली है। वेदों में उखली मूसर, आग पानी और सूर्य चन्द्र इत्यादि निर्जीव पदार्थों के वास्ते भी अनेक ठौर सम्बोधन दिये गये हैं—वेद में तीन प्रकार की ऋचा हैं अर्थात् परोक्षकृता (१) प्रत्यक्षकृता (२) और आध्यात्मिकी (३) इन में से प्रत्यक्षकृताओं में मध्यमपुरुष और त्वम् अर्थात् तू यह सर्वनाम लगाया जाता है जैसा कि यास्कमुनि का सिद्धान्त है (अथ प्रत्यक्षकृता मध्यमपुरुषयोगास्त्वमिति चैतेन सर्वनाम्ना)—अतएव वेदों में ऐसी शंका अयुक्त है नदियां परमात्मा की बनाई हुई जड़रूप हैं मनुष्यों का उन से बहुत उपकार होता है उन का जल उत्तम है—और सर्वोत्तम गंगा का जल है जैसा ऊपर कह चुके हैं—

इति ॥

आर्यगुर्जरपुस्तकालय फर्रुखाबाद की विरचित पुस्तकों का सूची ये पुस्तकें प० गणेशप्रसाद शर्मा पुस्तकाध्यक्ष से मिलेंगी

[स्वरचित वा मुद्रित पुस्तकें]

१—ईश्वरसिद्धि =) २—जगत् की उत्पत्ति स्थिति वा प्रलय का वर्णन =)॥ ३—होम यज्ञ विधि =)॥ ४—भोजन विवेक –)। ५—विद्यार्थि शिक्षा)॥ ६—भागवतव्यवस्था (दुबारा छपेगी)॥। ७—पुराणोत्पत्ति)॥। ८—पुराण लीला –)॥ ९—आर्यसमाज के उपकार (पुनःछपेगी))। १०—भजन विनोद (दुबारा छपेगा))॥ ११—महर्षि स्वामिजी श्री दयानन्द स० जी महाराज की कुछ दिनचर्या)॥ १२—सामाजिक स्तुति प्रार्थनोपासना)॥ १३—पुरुषार्थ)। १४—स्वामी भास्करानन्द जी का वलायत देखने का वृतान्त)॥ १५—धूम्रपान दोष (हुक्कापीनेकेऐब) । १६—प्रणव (ओंकार) व्याख्या)। १७—आर्यधर्म का महत्व)। १८—वैदिकविजय)॥ १९—मद्य दोष (शराबकीबुराइयां)। २०—भूतनिर्णय (यह उर्दू में भी है –)। २१—आवागमन (जीवका आना जाना))॥ २२—नमूना भागवत)। [illegible] (छपेगा))० २४—मत निर्णय)॥ २५—स्वर्ग की कुंजी)। [illegible]—सुशीलता)॥ २७—ब्रह्मचर्य रक्षण (वीर्यरक्षा))॥ २८—ईश्वर का स्वरूप व गुणकर्म स्वभाव)॥ २९—महा व्याहृति [illegible] व्याख्या)॥ ३०—गुरुमन्त्र व्याख्या)॥ ३१—ईश्वर की सत्ता) [illegible] ३२—ईश्वरभ-

ति और उस की प्राप्ति के उपाय)॥ ३३–वृक्षों में जीवनि-
ष)॥ ३४–राव रोशनसिंह वंगरा लिखित वेदपार का
खण्डन -)॥ ३५–जीव क्या है)॥ ३६–श्रीगुरु महातम)।
३७–विधवा विपत्ति उपन्यास)॥ ३८–वेद महिमा)।

॥ भारतसुदशाप्रवर्त्तक ॥

यह पत्र प्रायः समाजों व आर्य्यसुजनों की सहायता व गुण ग्राहकता से २० वर्ष से छपता है। पत्र का नामकरण महर्षि स्वामीदयानन्द स० जी महाराज ने किया था मूल्य १।) साल डाकव्यय सहित है खर्च छपाई देकर बचत का पैसा धर्मार्थव्यय किया जाता है अतः दूना लाभ है॥

प्रार्थनापत्र इस पते पर भेजना चाहिये

मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद अथवा सम्पादक

भारतसुदशाप्रवर्त्तक फर्रुखाबाद